ऋषि कुमार[40]

बाबा नागार्जुन का जन्म बिहार के दरभंगा जनपद के तरौनी गाँव में 1911 को दरिद्र ब्राह्मण परिवार में हुआ। पर वास्तव में इनका जन्म ननिहाल के ग्राम सतलखा (पोस्ट–मधुबनी) जिला दरभंगा में हुआ था। लेकिन पैतृक ग्राम तरौनी था इसलिए यही लिखा जाता है।

नागार्जुन की रचनाएँ बेबाक एवं लोगों के दिलों को छू लेने वाली होती है। वे अपने काव्य में सामाजिक समस्याओं को उजागर करने के लिए व्यंग्य को माध्यम बनाते हैं। इनको इनकी व्यंग्य प्रधान कविता ही आधुनिक हिन्दी कविता में अलग पहचान दिलाती है। समाज, जाति, धर्म इन सब पर लिखना एक बात है; पर राजनेता, राजनीति पर लिखना एक और बात है। इन्होंने समाज के साथ–साथ राजनीति पर विशेष करके लिखा जिससे इनकी एक अलग छवि बनती है। कबीर के बाद अगर कोई दूसरा व्यंग्यकार हुआ तो निः संदेह आधुनिक काल में नागार्जुन हुए।

व्यंग्य की परम्परा अति प्राचीन है किन्तु हिन्दी साहित्य में इसका सर्वाधिक मुखरित प्रयोग सर्वप्रथम कबीर ने ही किया। पहली बार हिन्दी में काव्य की भाषा और जनभाषा में काफी समता दिखाई पड़ी तथा व्यंग्य का तीखा स्वर भी सुनाई पड़ता है। व्यंग्य तो जनभाषा में ही करारी चोट करता है। प्राचीन साहित्य में व्यंग्य मूलतः मनोविनोद तक ही सीमित था। जो काम कबीर ने व्यंग्यों का प्रयोग आत्मशुद्धि और समाज–सुधार के लिए किया। वही काम आधुनिक काल में भारतेन्दु, नागार्जुन, हरिशंकर परसाई, धूमिल, त्रिलोचन आदि ने किया।

नागार्जुन ने अपने आस–पास की दुनिया की श्रांधता को व्यंग्य के माध्यम से दर्शाया है। वह इसलिए कि इन्होंने इसे जिया एवं भोगा है। व्यंग्य समाज और व्यक्ति की दुर्बलता, अविचार को पकड़ता है और उस पर प्रहार करता है। प्रहार भी इसलिए कि केवल प्रहार करने के लिए नहीं बल्कि समाज एवं व्यक्ति को सुधारने के लिए। नागार्जुन सबसे पहले अपने पर ही व्यंग्य करते हैं और कहते हैं– यह बनमानुष/ यह सत्तर साला उजबक/ उमंग में भरकर सिर के बल/ नोचने लग जाता है/ अकेले में बजाने लगता है सीटियाँ/ आये दिन। (प्रतिनिधि कविताएँ, पृ०–8) जो व्यक्ति अपने प्रति इतना निर्मम हो सकता है वह दूसरों की विसंगतियों के प्रति कैसा हो सकता है? यह उनके कविताओं से ही पता चलता है। इनकी मुख्य काव्य रचनाएँ– 'युगधारा'– 1987' 'खिचड़ी विप्लव देखा हमनें'– 1980, 'सतरंगे पंखोवाली'– 1984, 'पत्र हीन नग्नगाछ'– 1981 है। बाबा नागार्जुन की दृष्टि छोटी–से छोटी चीजों पर भी पड़ती है। जहाँ किसी की नजर नहीं पड़ती; जैसे– 'नेवला', 'मुर्गे ने बाग' दी, 'फसल', 'भुस का पुतला', 'कटहल', 'जोड़ा मंदिर' आदि। इनकी कविताओं को किसानों एवं चौपालों तक सुना जा सकता है इसलिए डॉ० रामविलास शर्मा ने कहा है कि– ''नागार्जुन ने लोकप्रियता और कलात्मक सौंदर्य के संतुलन और सामंजस्य की समस्या को जितनी सफलता से हल किया है, उतनी सफलता से बहुत कम कवि–हिन्दी से भिन्न भाषाओं में भी हल कर पाए हैं।'' (प्रतिनिधि कविताएँ, पृ०–10) इस प्रकार देखा जाता है कि तुलसी के बाद बाबा नागार्जुन अकेले ऐसे कवि है जिनकी कविता की पहुँच किसानों की चौपालों से लेकर काव्य रसिकों तक है। नार्गाजुन ने अपने सम्पूर्ण लेखन में व्यंग्य को एक अस्त्र के रूप में इस्तेमाल किया है। उन्होंने

[40] पंचकोट महाविद्यालय, (विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग), सरवड़ी, रूलिया, पं० बंगाल

जीर्ण– शीर्ण संस्कृति पर प्रहार किया है और विजयिनी जनवाहिनी की पक्षधरता की है। आजादी के बाद उन्होंने देश की बदलती परिस्थितियों को नजदीक से देखा है और भोगा है इसलिए उन्होंने राजनीतिज्ञों पर सर्वाधिक व्यंग्य लिखा है। आजादी के बाद देश की राजनीति क्रमशः अधोमुखी हुई है। दलबदलूपन, भाई–भतिजावाद, भ्रष्टाचार, झूठेवादे आदि ने भारतीय राजनीति को दिक् भ्रमित कर दिया है। इसलिए नागार्जुन ने राजनीतिज्ञों और राजनीति पर सर्वाधिक प्रहार किया है। भारत आजाद हुआ है। व्यापारी नेताओं के साथ मिलकर जनता को लूट रहे हैं। गाँधी और तिलक के नाम पर जनता का शोषण हो रहा है। इसका एक व्यंग्य चित्र ''नया तरीका'' कविता में द्रष्टव्य है।

नया तरीका अपनाया है राधे ने इस साल

बैलों वाले पोस्टर साटे, चमक उठी दिवाल

नीचे से लेकर ऊपर तक समझ गया सब हाल

सरकारी गल्ला चुपके से भेज रहा नेपाल

अंदर टँगे पड़े है गाँधी–तिलक–जवाहरलाल

चिकना तन, चिकना पहनावा, चिकने–चिकने गाल

नया तरीका अपनाया है राधे ने इस साल

(प्रतिनिधि कविताएँ, कविताएँ, पृ०–16)

नागार्जुन ने कांग्रेसी नेताओं पर चुभता हुआ व्यंग्य किया है। कवि आधुनिक भारत की नवीन योजनाओं पर भी प्रहार किया है। भारत सरकार द्वारा विदेशी नेताओं के स्वागतार्थ जो अपव्यय किया जाता है, उससे नागार्जुन पूर्णरूपेण अन्ततः मन से क्षुब्ध एवं दुःखी है। एक ओर जहाँ भारतवासियों को दो जून की भोजन नहीं मिलती है वहीं दूसरी ओर विदेशियों के स्वागत में करोड़ों का खर्च हो रहा है। सचमुच यह एक बड़ी विडम्बना है। अतः ऐसी स्थिति को देखकर किसी भी कवि को आक्रोश आना अति स्वाभाविक है। नागार्जुन भी देश की इस अवस्था एवं परिस्थिति पर गहरी संवेदना प्रकट करते हैं। आजादी के बाद एलिजावेथ भारत आ रही हैं। कॉमन बेल्थ एक शोषण यंत्र है। इस पर पूर्णतः अंग्रेजों का नियंत्रण है। कवि नागार्जुन नहीं चाहते कि भारत आजादी के बाद भी उपनिवेशवाद का गुलाम बना रहे, इसलिए वे पंडित नेहरू पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं–

आओ रानी, हम ढोएँगे पालकी,
यही हुई है राय जवाहरलाल की
रफू करेंगे फटे–पुराने जाल की
यही हुई है राय जवाहरलाल की
आओ रानी, हम ढोएँगे पालकी। (प्रतिनिधि कविताएँ, पृ०–101)

कांग्रेस आजादी के बाद सत्ता में रहने के लिए तरह–तरह के हथकंडे को अपनाती है। वह विभिन्न दलों को तोड़कर अपने दल में मिलाती है। कभी शुद्धिकरण के नाम पर कुछ नेताओं को सत्ता से हटाती है तो कभी कुछ को सत्ता में लाती है यह सब अपने स्वार्थ के अनुसार चलते रहता है। चाहें जनता का जो भी हाल हो उससे राजनेताओं का कोई लेना–देना नहीं है। कभी कुछ चीजों का राष्ट्रीयकरण करती है, किन्तु कांग्रेस की मानसिकता एक खानदान की गुलामी की ओर झुकी रहती है। नागार्जुन इन सारी चीजों से दुखी होकर 'मंत्र' कविता में लिखते हैं कि–

ओं दलों में एक दल अपना दल, ओं

ओं अंगीकरण, शुद्धिकरण, राष्ट्रीकरण
ओं मुष्टीकरण, तुष्टीकरण पुष्टीकरण
ओं एतराज, आक्षेप, अनुशासन
ओं गद्दी पर आजन्म वज्रासन
ओं ट्रिव्यनल ओं आश्वासन
ओं गुट निरपेक्ष सत्तासापेक्ष जोड़तोड़
ओं छल–छन्द, ओ मिथ्या, ओं होड़महोड़।

नागार्जुन के व्यंग्य में अपने समय के विडम्बनाओं एवं भावी भारतीय समाज के आदर्शों और वर्तमान संघर्षों का आग्रह एक साथ होता है। वे आधुनिक जीवन और संघर्षशील श्रमिक जनता का सुनियोजित चित्रण करते हैं। हमारी सभ्यता समाजवाद के कुछ मूल्यों को शिरमौर्य बना सकती है, आधुनिक राजनीति का भोड़ापन समाज को तबाह कर सकता है। वे इस परिवेश में भी अपने गाँव एवं समाज के भाई–चारे और प्यार मोहब्बत को बचाये रखना चाहते हैं और शहरों में उगते–पनपते अजनबीपन का घोर विरोध भी करते है। वे छद्म बुद्धिजीविता, अलगाववाद और स्वार्थपरता को इसी महानगर का अभिशाप मानते है। वे शहर के लोगों की मानसिकता, धूर्तता आदि से वाकिफ है एवं उनसे पूछते हैं कि–

दूध सा धुला सादा लिबास है तुम्हारा
निकले हो शायद चौरंगी की कविता खाने
बैठना था पंखे के नीचे, अगले डब्बे में
ये तो बस इसी तरह
लगाएँगे ठहाके, सुरती फाँकेंगे
.....
जी तो नहीं कुढ़ता है?
घिन तो नहीं आती है?
(प्रतिनिधि कविताएँ, पृ०–36)

इसी क्रम में नागार्जुन महानगर में मजदूरों की दशा देखकर उनका मानव मन दुखी हो जाता है, जहाँ मजदूर श्रमिक अपने जीवन जीने के लिए संघर्षरत है; वही पूँजीपति लोग इनका शोषण कर, ऐशो–आराम परस्त जिंदगी जीते हैं। इस पर एक व्यंग्य 'काली माई' कविता में देखने को मिलती है–

कितना खून पिया है, जाती नहीं खुमारी।
सूर्ख और लम्बी है मइया जीभ तुम्हारी।
मुण्डमाल के लिए गरीबों पर निगाह है
धनपतिओं के लिए दया की खुली राह है।
धन–पिशाच का लहू नहीं अच्छा लगता है
वह औरों की बलि देकर तुमको लगता है।
(प्रतिनिधि कविता, पृ०–108)

नागार्जुन शिक्षा के प्रति भी चिंतित थे, वे शिक्षक को महिनों पैसा न मिलने के कारण मरने के बाद कहते हैं कि–

''ओ रे प्रेत–''
कड़क कर बोले नरक के मालिक यमराज
–''सच सच बतला।''
कैसे भरा तू?
भूख से, अकाल से?
बुखार कालाजार से?
पेचिस बदहजमी, प्लेग महामारी से?
कैसे मरा तू, सच सच बतला।''
(प्रतिनिधि कविताएँ, पृ०–94)

नागार्जुन के ये तीखें व्यंग्य विध्वंसकारी नहीं, नवनिर्माण के लिए है। नागार्जुन ने आपातकाल, कांग्रेसी शासन, श्रमिकों का संघर्ष शहरों के सफेद पोश धोखेबाज, किसान समस्या की यंत्रणा को झेला है। इसलिए नागार्जुन ने अपने कविताओं में अपने समय के उन सभी राजनीतिओं और राजनीतिक संगठनों एवं उपनिवेशवाद के समर्थन करने वालों पर प्रहार किया है, जिन्होंने मानव विरोधी भूमिका अदा की है या पूँजीवाद का समर्थन किया है। नागार्जुन ने केवल राजनीतिक व्यंग्य ही नहीं हुई, बल्कि सामाजिक व्यंग्य भी लिखा है। आजादी के बाद सबसे अधिक उपेक्षा शिक्षा की भी हुई है। मंत्री, सत्ता और स्वार्थ की राजनीति में शिक्षा को भूल जाते हैं। शिक्षक उपेक्षित रह जाते हैं। नागार्जुन ने शिक्षक की दरिद्रता का व्यंग्य चित्र 'प्रेत का बयान' में प्रस्तुत किया है।

नागार्जुन का व्यंग्य प्रतिबद्धता और क्रमबद्धता से जुड़ा हुआ है। वे समाज से उसकी प्रगति के लिए प्रतिबद्ध हैं। वे विसंगतियों से भरे इस समाज को बदलना चाहते हैं। वे चाहते हैं एक नया समाज बने। उन्होंने व्यंग को एक विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान किया है। जिसमें लोकतंत्र है, मार्क्सवाद है और आतंकवाद भी। वे राष्ट्रीय स्तर के सभी दलों की कमजोरियों का पर्दाफाश करते हैं। वे समाज को गुमराह करने वाले सभी दलों पर प्रहार करते हैं। उनकी कलम में आतंकवादी ज्वाला है, उनके व्यंग्यों में भारत का लोकतांत्रिक और जनवादी स्वरूप उभरता है। व्यंग्य तो सर्वाधिक विवेक को ही छुता है। नागार्जुन राष्ट्रीय ही नहीं, विश्व विवेक के जनक हैं। उनके व्यंग्यो ने मानव की तमाम ह्रासोन्मुखी प्रवृतियों पर प्रहार किया है और उनकी चोट से नये विवेक का कमल खिलेगा। आदमी सहज ही व्यंग्य को न झेल पाता है, और न ही भूल पाता है। नागार्जुन के व्यंग्यों ने मानव विकास के विरोधी तमाम कुरूपताओं पर प्रहार किया है। नागार्जुन के व्यंग्यों में एक तरफ कालीदासीय आभिजात्यता है, और दूसरी तरफ कबीर का फक्कड़पन है। वे व्यंग्य को हथियार के रूप में प्रयोग कर अपनी पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान करते है। समाज के विभिन्न समस्याओं से लोगों को अवगत कराते एवं उसके निदान के लिए सदा प्रयास करते है।

1. नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ, संपादक–नामवर सिह, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली–चौथी आवृति– 2000

লোকসংস্কৃতির ঐতিহ্য ও জাতীয় সংহতি

দয়াময় মন্ডল